

संदीप्ति

माणकचन्द रामपुरिया



नवयुग ग्रंथ कुटीर
बोकारनेर

□□

प्रकाशक
नवयुग प्रथ कुटार
बीकानेर

□□

मुद्रक
शिक्षा भारती प्रेम
बीकानेर

□□

प्रथम संस्करण
जुलाई १९६८

□□

मूल्य ८०० पं

आत्मनेपद

आत्मनिष्ठ भावनाएँ जब व्यक्त होती हैं, तब मनुष्य सम्पूर्ण सृष्टि के साथ तादात्म्य का अनुभव करता है। विश्व के हर कण पर उस भावना प्रतिबिम्ब दिखाई देने लगता है। जब चेतन में कहीं भी कोई विरोध नहीं। सब एक सूत्र में गुँथ दिखाई पड़ते हैं। सगता है माना एक ही स्रोत से निःसृत सम्पूर्ण सृष्टि विभिन्न नामा रूपों में अभिव्यञ्जित हो रही हो। भावा का इसी अवतारणा पर गीता को सृष्टि माथिन है।

सदीप्ति एवात क्षणा में गुञ्जित आत्मनिष्ठ भावनाओं का सप्रह है।

जब भी दृष्टि पथ में ऊँचा की मद मुक्ता आयी, जब भी कानों में उमुक्त निकल का गान गूँजा, मन्त्रों की सन्तानी छटा जब भी दिखाई पडा, विह्वलों का कलरव जब भी मुनाइ पडा— लगा जैसे किसी ने मन के तारों का भङ्ग कर दिया हो। भावों की बीणा एवाएक मुग्धरित हो उठी। कृता की लाली होशों की मुस्कान धन गयी। पावम का हरियाली प्राणों का उल्लास बन गया। इतना ही नहीं, घनघार काली रात की श्यामता प्राँधो में

पजन बनकर चमकने लगी । कहीं कोई भेद नहीं । कहीं कोई उद्वेग
नहीं । सम्पूर्ण सृष्टि एकाकार हो उठी ।

गीत स्वयं गुंजित होने लग । सगा, काँई गाता व माध्यम
न घपन है स्वयं का सृजन कर रहा है । जीवन व सभी विभक्त
तत्त्व इस एकानता में लाने हो गये ।

और भावा का यह तत्त्वानता मरे गीतो की सन्धीति है ।

—माणकचंद रामपुरिया

पृष्ठ-विवरण

ले लो मरा पत्र	१	३०	मर्म
भाग गया मधुमास	३	३५	दीप सिखा
निगि गहरी	५	३७	आव्हान
मिथु अघाह	७	३९	सह लुगा
काई आता	९	४१	बचन दूते
उत्पीठन	११	४३	मन पूले
मार	१२	४५	मरे पय पर आने रहते
सजाआ	१४	६७	देयो बमी
अगहा	१६	०९	एत हा दू
मिद्रिज	१७	५२	व्यथा पुगनी
सकल्प	१९	५४	सयोग
पास	२०	५६	अत्रनाध
नेरी छवि अनमोल	२२	५८	बवसो
जमाना	२४	६०	घर का सत्र अर्याजा
तुम आओगा	२६		मिहका खोली
धत्र न जगगी प्यास	२८	६२	दायित्व
बने	३०	६५	उत्तुत्ता
धारा बदन रही है	३२		

मन रामभो तुम श्यको	६७	१०१	मन पर कुछ अधिना न समझो
मगना		१०५	मने दो विश्वास
स्मृति	६६	१०७	धिन हृदय का
बहती मरी नाव	७०		मुनसान डगर का मैं राही
बीणा वा जत्र सरर जगता है	७२	१०६	भूम रनी है फूना की डाली या नही है आती
ताच मन वा मोर	७४	१११	कीन आत है आया ?
धिना बगा बगा मय है ?	७६	११३	उगता उगता मन गगता है
विल अइ अगगाई	७८	११५	उस दिन की है वान निराली
बया हया, जो कुछ नहा	८०	११७	चाग्नी मुक्ता रही है
मैने किया		११९	गू जती है रागिनी
दरें दरा होना है	८२	१२१	तुमको भा जो छोड़ देने के
घत मनी कुछ का निराल्य है	८४	१२३	आत ममको गीत गाते तो
मगता मन पर बोझ धरा	८६	१२५	गता गता मुक्ताती
मन जब उतर तो पड़ता	८८	१२७	एक मन म जागते हैं
अरुण मगता ह तुम रहुता	९०		पात्र गते की धन
वदन देर न दगा दूरा हू	९२		
कीति	९४		

		११०	आज विह्वल मन हमारा
		१११	आज सुनी की यह धना है
		११७	जाग रही अनुर म हनचल
स्वप्न मग साधना व गीत	१२८	११८	दुनिया भर का व्यग
व आसार नगि			मन पर
मान, जाना ह	१३१	१६१	मान मग मान क्या था ?
आप अपना वर मग	१	१६३	आज सारा न रही है
निर्माण		१६५	मिनो काता
जय भी नन म चार	१३५	१६८	निर्वास एक दिनाग
निष्कला		१७०	चाटना न मी मुम्ह
सपरार सितना गहग	१३७		पहचानना
अना और चरना है	१	१७२	सिना हृदय उगास
उर म जगता वर चरना	१८१	१७४	मन मा नोदक जनना है
बुभा नोप मग निर्मि	१४	१७६	कमा यर अनुराग
घार छाया		१७८	गीता का वरनात चाहिए
रात रात भर रचना	१४४	१८०	जान वाग जा न मग्गा
धामन			
नगली गत मुग्गा	१४७		
गाना व स्वर क न पा	१४९		
आज मधुर गान गान	१५१		

हम दोना का जम घटना पर	१८२	१६३	राह
रग म आन धमी ३	१८४	१६७	उल्ल है गग उल्ल ल
सज कु द जपन करना ज्ञाणा	१८६	१६६	प्रम वो भागा गिगाअं
उगन रग सज मना	१८८	२०१	दान रही परगा
राग रग बी	१९०	२०२	किना छोटा घर है
अन पन को चाह गनी है	१९३		

संदीप्ति

ले लो, मेरा पत्र

ले लो, मेरा पत्र ।

कभी बैठकर नदी-किनारे
हँसते हों जब भिन्नमित तारे
चुपके इसमें पढ़ लेना तुम—

भाव विकल सवत्र ।

ले लो मेरा पत्र ॥

मम-व्यथा इसकी भाषा है
विरह वेदना परिभाषा है

इसकी उपमा नहीं मिनैगी—

मित्र कही जयत्र ।

ले लो मेरा पत्र ॥

युग युग से मैं निसता जाया,

फिर भी नूतन दिसता जाया

भावा के रुचररा-वरण में—

कितने दीते सत्र ।

ले लो, मेरा पत्र ॥

पर पुरातन कान जयी है,
हर युग की यह कथा नयी है

इसका ही नभ चँवर उनाता—

ढोती वसुधा ऽघ्न ।
ते लो मेरा पत्र ॥

जाग गया मधुमास

जाग गया मधुमास ।

मेरे दृग में एक पहेली
बनी भावना सहज सहेली,
देख देख कर जगी नयन मे—

सागर जसी व्यास ।

जाग गया मधुमास ॥

प्राण-प्राण मे कम्पन लाया
जाने कौन कहाँ से आया,
कनी-कली पर निखर रहा है—

भौरो का विश्वास ।

जाग गया मधुमास ॥

अद्भुत भूतन की हरियानी,
जाग उठी है पूनोवानी
तर का कोपन कोपन छनका—

नयन का उल्लास ।

जाग गया मधुमास ॥

सृष्टि सदा फूलों से सुरभित,
भाव लहर में सदा निमज्जित,
प्रकृति-परी का सब परिवर्तन—

तेरा भृकुटि विनास ।

जाग गया मधुमास ॥

निशि गहरी

लगती निशि गहरी ।

दिन के मुसरित नव प्रकाश में
कमलाशय के सुस-सुहास में—

कौन तिमिर आँसो में भरकर—
काजल-सी उतरी ।

लगती निशि गहरी ॥

पड़ता कही न कुछ दिखनाई,
आँस-आँस में ही जकुलाइ,

मन पर कुछ चट्टानें जैसी—

लगती है ठहरी ।

उतरी निशि गहरी ॥

नीड़ों में सग जाकुल सोये,
नर के कर्म विवृत पन सोये,

पतकों के पनघट पर सजती—

सपनों की गगरी ।

उतरी निशि गहरी ॥

एसे मे भी में एकाकी,

जाग रहा वन ज्योति शिक्षा की

टैक यही अब कटे जगम तम—

मूँजे विभावरी ।

लगती निशि गहरी ॥

सिन्धु अथाह

मन का सिन्धु अथाह ।
कोई लगा न पाया इसकी—

जब तक कुछ भी था ॥

सबने देखा ऊपर-ऊपर
जीवन वैभव का स्वर भास्वर,
नही किसी ने देखा अब तक—

सागर मन की चाह ।

मन का सिन्धु अथाह ॥

अधर-अधर पर शीतनता है,
मादक क्षरा की प्रेम लता है,
प्राणों के गहर में जनता—

प्रतिक्षण दारुण दाह ।

मन का सिन्धु अथाह ॥

कैसे किसको पास बुसाऊ,
किन सुशियों का दीप जनाऊ,

नही किसी की रही हृदय मे—

अब कोई परवाह ।

मन का सिंधु अथाह ॥

चलू सदा मैं अपनी धुन में

मिला न कुछ सग के गुन गुन मे,

कोई अब तक जान न पाया—

कितनी लम्बी राह ।

मन का सिंधु अथाह ॥

कोई आता

कोई आता है ।

अंतर में कितना गहरा गम,

चौक-चौक उठता मन हरदम,

प्रतिक्षण लगता, कोई—

मुझ बुलाता है ।

कोई आता है ॥

जागी जाने क्यों चंचलता ?

मन में क्याकर आज विकलता ?

कोई मेरे मन की—

धीन बजाना है ।

कोई आता है ॥

सागर में उद्दाम तरंगों,

प्राणा में उत्तान उमंगों,

लगता कोई मन से—

गीत सुनाता है ।

कोई आता है ॥

मैं धरती का निश्चय प्राणी,
अपनी माटी का विर मानी,
सगता कोई स्वर को—

दृढ कर जाता है ।
कोई आता है ॥

उत्पीडन

सग-कुल प्राकुल सिसक रहे है

विकल हृदय की बात,

भुलस गया है नीड शक्ति का

धूमिल-धूमिल प्रात,

प्राण प्राण मे विह्वलता है

आंसू दीन मलीन

लास बजाया, बज न सकी पर

मरे उर की दीन,

जहाँ जहाँ भी दृष्टि फिराधी

देखी सृष्टि उदास

अपने सपने ही जीवन का

करते थे उपहास,

सभी तरह से आज बना है

में देजार अरीर,

सीमाहीन महासागर-सी

मरी पीर गभीर;

भार

भाव सुमन मेरे प्रारो का

दुनिया में मुस्काये,

जीवन की जनती दोपहरी—

में घन बनकर छाये;

सपने भाँखों में जकुलायें

गीतों में सहारायें,

विजनी बनकर शिखर शिखर पर

मुझे बुनाने प्रायें;

कोमल मन भोनी किररा का

भार नहीं सह पाता

कोई मेरे शून्य निनय में

जपनी दीग बजता

नाच रने है हसी सुनी में

जावन तर की पाती;

जाने कौन कहाँ की शोभा

मुझको आज बुनाती;

लेकिन कैसे, जाऊ ऐसे
घोड भरा ससार,
तडप-तडप उठता है रह-रह
मेरे मन का प्यार,

सन्धि ।

भव है कैसी दाया ?—जाजो—

गीत सुनाओ ।

उर के दिसरे तारो को प्रिय—

जाज रजाजो ॥

असह्य

रजनी के सूने प्राण मे,
कुछ फूल खिले
पथ पर रुके बटोही से
हर वार मिले

शाख मिचौनी खेल रहे हैं
मीत पुराने
करते लाज बचाने को सब
लाख बहाने

सपनों का आर्तिगन होता
मुग्ध हृदय है
अरुणोदय के शिखर शिखर पर
भव की जय है

सूनी घड़ियाँ सतज नहीं हैं
दर्द बटोरनीं,
इहे त्याग कर जाता हूँ मैं
रात सुनाती,

क्षितिज

हे मुझ में विश्वास ।

निश्चय भू पर झुक जायेगा

क्षितिज निश्चय अनाश ।

तुल्य मिले या चाहे नो है

भरमाऊ परवा नो है

एक अक्षरिडन गरी मन म

इस धरती की प्रियः

हे मुझ में विश्वास ॥

मैं निर्वाध नदी की धारा
बिना न मुझको कभी सहारा
मेरा अपना मन ही मेरे—

जीवन का इतिहास ।

है मुझ में विश्वास ॥

सकल्प

अब मैं निश्चय घर जाऊंगा,
बहुत थका कुछ सुस्ताऊंगा
जलते नभ में उडा अकेला,
देख न पाया कोई मला
नीचे नीडो में खग झावक
रहे चीखते जाने कब तक
कि तु हृदय में लगन लगी थी
कोई सूनी जनन जगी थी
पन भर को भी रुका नहीं मैं
वाधाओ में भुका नहीं मे
उड़ता रहा अकेले उपर,
रातें थे सब सपने भूपर
अब है उनकी याद सताती
सूने में आखें अकुलाती
अत जाण मैं लौट चनुगा
पुन कभी नभ में निक्नुगा

पास

रहता कोई पास ॥

मेरा अंतरतर भी इतना होता नही उदास ॥

मन म केवन सुनापन है

मरु-तर गा सूखा जीवन है

नाही कभी न अत्र हरियानी जीवन मे मधुमास ।

रहता कोई पास ॥

उजड़ा-उजड़ा-सा सब लगता

दिशा दिशा म धुआ सुनगता

धरती पगती-भी नगती है जम्ता-या आकाश ।

रहता कोई पास ॥

सृष्टि न कुछ भी धु धली लगती
मन की छवि जासो में जगतो,
इतना पकिस कभी न हाता मानव का इतिहास ।
रहता कोई पास ॥

पास

रहता कोई पास ॥

मेरा वह तरतर भी इतना होता नहीं उदास ॥

मन में केवल सूनापन है

मरु तरु सा सूखा जीवन है

लाती कभी न अब हरियारी जीवन में मधुमास ।

रहता कोई पास ॥

उजड़ा-उजड़ा-सा सब लगता

दिशा दिशा में धुआं सुलगता

धरती परती-नी लगती है जलता-सा अवाश ।

रहता कोई पास ॥

तरी छवि अनमोल

तेरी छवि अनमोल ।

देखा उस दिन वहाँ खड़ी थी,
मादकता की एक कड़ी थी

कोई क्षण न सकता उसका—

निज जावन से मोल ।

तरी छवि अनमोल ॥

जलभृत तरे दृग की रेखा,

यसा मने रूप न देखा

तरे चन्द्रबदन को आभा—

कौन सजेगा तौन ?

तेरा छवि अनमोल ॥

तुम मे जग की निधिया सारी

तुम पर प्रकृत स्वय वनिहारा

तेरे नयनों की मनु भाषा—

कौन सजगा वीन ?

तेरा छवि अनमोल ॥

जहाँ-जहाँ भी देखी लानी
घनकी तेरी ही मधु प्याली,
रे अधरा की लानी से—

जग का नाम कपोल ।
तेरी ध्वनि अनमोल ॥

जमाना

भूल न सक्तता उन्हें जमाना

जिनके कर्म विकृत प्रारो मे

चिर शोचन वा मधुर तराना ।

भूल न सक्तता उन्हें जमाना ॥

चंद्र भाये जो गिरि पर तन कर,

मथ उनै जो भगम समुदर

निया न जग से मोन कभी भो—

सोखा धवल गला कटाना ।

भूल न सक्तता उन्हें जमाना ॥

काटों में फूना के जैसा—

सीखा केवल है मुस्काना ।

भूल न सकता उह जमाना ॥

वे ही धरती के सवन हैं

अस्त-भीत मानव के दम हैं,

उनको ही शाश्वतों के प्राण—

सजता नित उषा का दाना ।

भूल न सकता उह जमाना ॥

तुम आओगी

निश्चय तुम आओगी ।

अ तर मे वि जास अन्न है

रासा म उ द्यास प्रल है

आज नी तो कल मानस म—

सुरभि मधुर लाओगी ।

निश्चय तुम आओगी ॥

पाम न कुत्र भी मेरा अपना

बन बन कर भिन्ता है अपना

स्व न तभी मारार बनग —

जब तम सुस्काओगी ।

निश्चय तुम आओगी ॥

सूख न पाया ग्य का अवन,

गिरत ते गगन में दादन

वाक्य क्या तब न रहगा—

स्वाती दरसाओगी ।

निश्चय तुम आओगी ॥

गहरी नींद नगी आसो का,
शक्ति नही मन के पासो को,

कन मुझ जगाने के हित—

आकर तुम माओगी ।

निश्चय तुम आओगी ॥

अथ न जगगी प्याम

अथ न जगगी प्याम ।

जग से मुझको दृष्ट मिमा है

पतभर में भी लक्ष्य क्षिण है

अथ ता भरा-भरा लगता है—

नयना का आकाश ।

हँसती जब मेरी परछाई

खिलने लगी कभी जनसाई

अथ तो मन के जमज खिने हैं—

ढैना शुभ प्रकार ।

तरु-तरु के पल्लव पल्लव पर

जगमग-जगमग किरणों का स्वर,

जड़ चेतन की साँस साँस में—

मेरा सहज सुवास ।

×

×

×

तिमिर हृदय पर रहे न अकित

वने न नरता कभी कलकित

मैं प्रतिनिधि हूँ मानवता का—

मनुष्य का दिव्य विकास ।

जब न उगेगी प्यास ।

धारा बदल रही है

धारा बदल रही है ।

कद से थैला रंग ऊषा-रा

दृग से उठता रद धुम सा

सहसा पा संकेत तुम्हारा गति प्रति गम्भिर रही है ।

धारा बदल रही है ।

फूल फूल पर गति भाजनै

गागी मन मे मन के गाने

सूने अंतर की मृदु पीडा अब तो तरन नहा है ।

धारा बदल रही है ।

अब तो कोई दर्द नहीं है

फोटी की छवि न, नती है

फूम मना क्या शूलों तम से तद्विद्यत बदल रही है ।

धारा बदल रही है ।

मर्म

अपने दिन का दर्द न खाली—

मन-ही मन सहता था ।

कोई मग का दाद न देखे
घान्म खग की चाह न देखे
जग ता केवल हम सबता है—

फिर क्या क्या सनाथा ।

अपने दिन का दर्द न सोनो—

मन-ही-मन गन्नाथा ॥

दू दू फूल से या तग पलकों
गन के कार्ड भाव न छरकों
कोई भी कछ नद न ममभ—

भौस नही दनाथा ।

अपने दिन का दर्द न खोला—

मन-ही-मन मन्नाथा ॥

आह्वान

किसका नयन सदा राना है ?

किसका जीवन भार हुआ है

हृत् प्रम हो साधार हुआ है

लासू में अपने नयना के वीन बना मोती खोता है ?

किसका जीवन नभ में छाई

कभी न ऊषा को अरुणाई

माने पा चम चम दिन किसका सध्या-सा काना होता है ?

किसने इतना जग में पाया

दुगना खा जिमसे भरमाया

किसके मग में पग पग जग भी दिक्कन समझ काटा बाता है ?

<

<

>

दक्ष चुका मैं जग का जो भर

मुझ-सा कोई नहा कही पर

मह लू गा

मह लू गा ।

चाहे जा आघात मिले

म मह लू गा ।

अतरतर की बातें सारी,

अपनपन की सब लाचारी

चाहे काइ सुने न फिर भी

कह लू गा ।

नह लू गा ॥

किम बना अवकाश कि मेरी—

दख दृग म गगन अरेरी

दुनिया की धारा में में भी

बह लू गा ।

सह लू गा ॥

मन मान की द न नही जव

कटन व भी रात ननी जव

बन्धन टूट

उनके अब सब बंधन टूट ।

छन स जिनकी भाव भरी थी
द्विद्रो वानो नयी तरी थी

ममता में कामकर जकड़ थ—

अपने बन जो सपन भूठे—

उनके अब सब बंधन टूट ।

तस्वीरा की तड़ी पड़ी थी
धीरे को दोवार खड़ी थी

धीरे धीरे उतर घारा तक—

सा जग जा रग मनुउ—

उनके अब सब बंधन टूट ।

जिनके कारण अपने घर स—

टूट चुके ये हम मानर स—

जिनके छविशा सम्पत्तण म—

सगत जीवन के रस जूड ।

उनके अब सब बंधन टूट ।

दायित्व

[१]

एक दिन इस विश्व की मिट
जायगी निराल जवानो,
बाल बंशो पर न होगो—
एक दिन मरो कानो

[२]

भित्तों के उस पार होगा—
दूर मन्वि का किनारा
वेदना में राह भूले,
को मिलेगा क्या सहारा ?

[३]

मूक नयनों से टनकता—
दाध मन का उधार होगा
चेतना की हर किरण पर—
मृत्तिका का क्षार होगा

[४]

दशाष्ट मूनापन चतुर्दश—
भूमि रत-रत सी गयी है
गुच्छ दूर्गों के दान का—
आसुत्रों से था रती है

[५]

भान वीरा, तो गई है
हार काद न न पना
नाश की सम्भावना पर
साध का स्वर लग न पाता

[६]

जिदगी अकल रती है—
वेदना का रागिनी ने,
गम रा है, अग्नि वश—
ने रा है वादनी म

[७]

चांद सूरज हम रत है—
न वा पर वषण जरत
ीप पर मनुवशर के—
नश का दासि-व धरत,

दायित्व

[१]

एक दिन इस विश्व की मिट
जायगी निराल जवानों,
काम पसो पर न होगा—
एक दिन मरो कान्नी

[२]

भित्तिज के उस पर होगा—
दूर मन्त्रि का किनारा
वेदना में राह भूयै,
को मिलेगा क्या सहारा ?

[३]

मूक नयनों से दुसकता—
दग्ध मन का पवार होगा
चेतना की हर किरण पर—
मृतिष्ठा का क्षार होगा

व्याप्त सूनापन चतदिक—
 भूमि रत्न रत्न रो रही है
 गुच्छ फूलो क दला को—
 आसुआ से धा रही है

दायित्व

[१]

एक दिन इस धरत की मिट
जायगी निराल जवानी,
बान पंखों पर न होगी—
एक दिन मरो कगनी

[२]

भित्ति के उस पर होगा—
दूर मज्जिम का किनारा
वेदना में राह झुसे।
को मिलेगा क्या सहारा ?

[३]

मूक नयनों से दुःखकता—
दाध मन का पथर होगा
चेतना की हर किरण पर—
मृत्तिका का क्षार होगा

उन्मुक्तता

कहने की क्या बात, समझो मन से मन की बात ॥

हर रोज यही तो होता है

सब भार हृदय ही ढोता है

काटे कटती कहां नग्न में ऐसी काली रात ।

कहने की क्या बात समझो मन से मन की बात ॥

भू पर हरियानी गीली है,

दुवा की आस पनीली है

कैसे फिर एक पाय मेरी आँखों की वरसात ।

कहने की क्या बात समझो मन से मन की बात ॥

मिलने की जब तक दूरी है,

मुझ में तुझ में मजबूरी है

तब तक कभी न मिल पायेगा प्राणा का जन्जात ।

कहने की क्या बात समझो मन से मन की बात ॥

<

>

चाहा बहुत कि नभ मुस्काये

मन का पाहुन मन से आये

लेकिन जब तक रात न बीती, जगा न मन का प्राण ।
कहने की क्या बात समझ लो मन से मन की बात ॥

मत समझो तुम इसको सपना

मत समझो तुम इसको सपना—

जीवन का रूप दिखाता हूँ।

काटों में जिसके पर उनमें

वड़े कष्ट में थे जो सुनभे

उड़ती हुई तितलिया का मन

रक्षित है, तुम्हें बताता हूँ।

मत समझो तुम इसको सपना—

जीवन का रूप दिखाता हूँ ॥

पर्वत का फोड़ वहा निर्भर

निश्चित जिससे भव का ऊसर,

इसकी गति में जीवन का स्वर

आगे, नवगीत सुनाता हूँ।

मत समझो तुम इसको सपना—

जीवन का रूप दिखाता हूँ ॥

दूर गगन में मूक सितारा,

जिसे नहीं था कही सहारा,

उसके अंतर को बरना को—
भू पर मैं माता जगता हूँ ।
जीवन का रूप दियता हूँ ॥

मेरी तो है कथा पुरानी
सघनों में जावित प्रणी

भाव सुमन नित अग्रा करता—
अपना मन को बरना हूँ ।
जीवन का रूप दियता हूँ ।

मृति

आज भी है शेष तर प्यार की अतिम निशानी ।

व्याम मे तार अगिन जहाश चलत,

दीप की लौ पर शमम चुपचाप जनत,

राज भर मन को नयन को स्वप्न प्रकृत

आज भी चातक मुन ता प्यार की ज्वनी कहानी ॥

मिथुम बडवा भयकर जन रहा है,

दिन न जान टूटता क्या ठल रहा है

'पी कहा —कहता पपीहा ले नयन म आज पानी ।

खो गया जब जिदगी के प्यार का क्षण,

जन उठी धू धू' चतुर्दिक आग भीषण

व्यथ सा लगन लगा अवशेष जीवन,

रास उर में सि धु टग म और यह जनती जवानी ।

आज भी ह शेष तरी याद को अतिम निशानी ॥

स्मृति

आज भी है शेष तर प्यार की अतिम निशानी ।

व्याप म तारे अगिन वहीश चलते

दोष की ली पर शम्भ चुपचाप जनते

रात भर मन को नयन को स्व न छनते

अज भी चातक सुनता प्यार की जनती कहानी ॥

सि मु म बडवा भयकर जन रहा है

दिन न जन टूटता कथा टन रहा है

पो कहा कहता पपोहा से नयन म आज पानी ।

रुओ गया जब जि दगी क प्यार का शर

जन उठो धू धू चतुर्दिक् आग भीषा

व्यथ सा लगने लगा अवशेष जीवन

राख उर म सि धु टग म अरैरयट जनती जवनी ।

आज भी ह शेष तेरो यत्न की अतिम निशानी ॥

बहती मेरी नाव

बहती मेरी नाव ।

चाहे हो जैसी भी धार,
महाप्रलय का भीमाकार,

रुक न सकेगी नाव सि धु का—

जैसा रहे बहाव ।

बहती मेरी नाव ॥

चाही सबने कुछ पहचान
गूजे कितन विह्वल गान;

रुकी न फिर भी मेरी नया—

छूटा सारा गाव ।

बहती मेरी नाव ॥

कितन प्राये लेकर प्यार
लेकर मृदु कनिया का हार

मेकिन धन में जाग न पाई—

अपन से कुछ चाव ।

बहती मेरी नाव ॥

अब तो नाव पड़ी मझधारं,
सभी तरह से है लाचारं,

तौट न सकता, अब तो मरे—

जोवन का ह दांव ।

बहती मेरी नाव ॥

वीणा का जब स्वर जगता है

वीणा का जब स्वर जगता है ।

प्राणों का जब स्वर सुनाता,

आँखों का काजल तज उलता

नूतन भाव कुमुद मुस्काते—

रस में दरबस मन पगता है ।

वीणा का जब स्वर जगता है ॥

बन जाता तन मन मायाला

रोम-रोम ने पा हो लाना

उड़ उड़कर श्वग डान डान को

मधुर प्रीत से आ लगता है ।

वीणा का जब स्वर जगता है ॥

काई सूझा घृा न रहता

काई रुझा प्राण न दरता,

हँसती परती धरती सुनकर—

सुप्रमाद पर दृग टगता है ।

वीणा का जब स्वर जगता है ॥

नयन गगन में छवि उतरानी,
नई विधा मादकता लाती,

मन को कितनी राहत मिलती—
भव का रूप निखर फबता है ।
दोषा का जब स्वर जगता है ॥

नाचे मन का मोर

नाचे मन का मोर ।

भावा के घन घिरे नयन मे
सिरहन कम्पन वन-उपवन में

खिलने लग ब्रजानक सपने—

मेरे मन की कोर ।

नाच मन का मोर ॥

भर भर कर उर धनक रहा है
सधन गगन तक तलक रहा है

भासू दृग से बरस बरस कर—

करते ठयाकुल शोर ।

नाचे मन का मोर ॥

रुके न इमका मादक नर्तन,
रुके न क्षण क्षण का परिवर्तन,

रहे लदय आशा मे पूरित—

रहे घिरे घनघोर ।

नाचे मन का मोर ॥

चम चम चमके चपना का पर,
मुखरित हा भावा का अतर,

नयन नयन में रहे उमड़त—

सपने गीत विभीर ।

नाचे मन का मार ॥

चिन्ता कौसी, कौसा भय है ?

बि ता कसी कौसा भय है ?

उर क्या उरना किमसे कौसे ?

सग अपने है ।

एक डान पर मिले अचानक

सब सपने हैं ।

मुभको यहां किसी से कोई

मतबद कसा क्या परिवध है ?

बि ता कसी, कसा भय है ?

मुभको चना है चनता है

आगे मेरे,

नही जानता ज्योति मिले या—

तम के घेरे,

मेरे दृढ़ चरणों के आगे—

पथ है केहन मन निर्भय है ।

बि ता कसी, कौसा भय है ?

राह फून से भरी मिने या
काट अनगिन
मभा का हो वेग प्रबल या
मधुक्रतु पलछिन

सब कुछ है स्वीकार मुझ जब
नही हृदय म कुछ सशय है ।
विता कौसी, कौसा भय है ?

क्या हुआ, जो कुछ गही मैंने किया

क्या हुआ जो कुछ नहीं मैंने किया ।

मिट्टि इनने काम से अती चली
हर दिवस के बाद फिर रजनी ढली

कौन जिम्मे पाट सब अंतर दिया ।

क्या हुआ जो कुछ गही मैंने किया ॥

थे हजारों आज उनका कुछ नहीं
है न उनके नाम पर पत्थर कही

मौन में भी क्या मला जग से लिया ।

क्या हुआ जो कुछ नहीं मैंने किया ।

मत जताओ प्यार मुझको छोड़ दो
नह का सम्पद सारा तोड़ दो

जासुआ से घाव जन्तर का सिया ।
क्या हुआ, जो कुछ नहीं मंने किया ?

देखे क्या होता है

देखें क्या होता है ।

भरता टग से ताप हृदय का,
इ गित जीवन के परिचय का

दाह दाध अन्तर अनजान—
मार अतुल टोता है ।
देखें क्या होता है ॥

सून मे जग नदी किनारे
छुव रहे हो भिनमिल तारे

कोई जगकर दुर्वादन पर—
जान क्यों रोता है ।
देखें क्या होता है ।

स्वप्न नयन से कभी न घूटे
सुरभि गगन का दाध न टूटे,

कोई दृग के पावन जन से—
अन्तर को धोता ह ।
देखें क्या हाता है ॥

अन्त सभी कुछ का निश्चय है

अन्त सभी कुछ का निश्चय है ।

कोई सब मान ना माने
कोई मेरा तेरा जान,

लेकिन सत्य यही है जग मे—
रात ढलेगी आज उदय है ।
अन्त सभी कुछ का निश्चय है ॥

अम्बर हैसता ऊषा जाती
तारावनियां तरु भिट जाती ;

कुछ भी नित्य नहीं है जग मे —
सदा धाम की ही वस जय है ।
अन्त सभी कुछ का निश्चय है ।

पावन मन का गीत सुनाता,
निश्चय कर्म साधते जाना

इस दुनिया में यही अकेले—
जीवन भर का मंगलमय है।
अतः सभी कुछ का निश्चय है ॥

लगता मन पर बोझ धरा है

लगता मन पर बोझ धरा है ।
सिसक सिसक कर अन्तर रोता
सूझ गया निर्भर का सोता

रास्र बने सपनों में खोये—
उर का सूखा घाव हरा है ।
लगता मन पर बोझ धरा है ॥

मेरे भावों के जागन में
जलते धूँ के नयन-नयन में

लगता कोई इन्द्रधनुष-सा
छुपके चपके-से उतरा है ।
लगता मन पर बोझ धरा है ॥

जिसके आगे राह नहीं है
गहराई की बाह नहीं है,

उसका शुभ्र प्रकाश अस्तरित
मर मानस-सा गहरा है ।
लगता मन पर वोढ धरा है ॥

मन जब ऊपर को चढ़ता है

मन जब ऊपर को चढ़ता है

धीरे-धीरे पग बढ़ता है

राही पथ पर चलने वाला

अपनी धुन पर ही मतवाला

चलता ही चलता है निशिदिन

फूँस मित्रों या काटे अगिन

ऊबड़-खावड़ राहा पर भी

अपनी कसुपित चाहो पर भी,

रोक लगता, पथ सुलभाता

धीरे धीरे बढ़ता जाता

उसको कोई सुना न पाता

कोई उसे न पथ दिखनाता

अपन जाप रुदा चन्ता है,

मोम बना वर सुद गन्ता है

कभी ऊही खिडकी खुलती है
 आँसू किसी से जा मिलती है
 फिर भी हम पर ध्यान न रखता,
 मन मान का मान न रखता
 वह तो धोर सिपाही पथ का
 आरोही ह पीरुप रथ का,
 उसकी सारी बात निरानी ।
 लायेगा वह भू पर लानी ॥

मन जब ऊपर को चढ़ता है

मन जब ऊपर को चढ़ता है

धीरे धीरे पग बढ़ता है

राही पथ पर चलने वाला

अपनी धुन पर ही मतवाला

चलता ही चलता है निशिदिन

फूल मिन था काटे अनगिन

उबड़ खावड़ राहा पर भी

अपनी कसुदित चाहो पर भी;

रोक लगाता, पथ सुनभाता

धीरे धीरे बढ़ता जाता

उसको कोई सुभा न पाता

कोई उसे न पथ दिखनाता

अपन आप रुदा चलता है,

मोम बना वर सुद गलना है,

अच्छा लगता है चुप रहना

अच्छा लगता है चुप रहना ।

दुनिया कहती ज्ञान नहीं है,
जोने का अभिमान नहीं है

मैं सब की सुनता रहता हू—
नहीं जानता क्या है कहना ।
अच्छा लगता है चुप रहना ॥

जो आते आघात लगाते
हम दर्दों के गीत सुनाते

कभी कभी अच्छा लगता है—
सब चुपचाप हृदय पर सहना ।
अच्छा लगता है चुप रहना ॥

पिट जायेगा धरती का तम,
रहेगी हरदम,

वीर व्रतो के लिए सहज —
क्रुद्ध धार पर चढ़कर बहना ।
अच्छा लगता है चुप रहना ॥

बहुत देर से रुका हुआ हू

बहुत देर से रुका हुआ हू ।

भरा हृदय है भुका हुआ हू॥

कौन मगर मुझको पहचाने ?

कौन भोड़ में किसको जान ?

सब अरने में नीन यहा है

मतलब स तलनीन यहा है

कोई आस तरेर रहा है

कोई आस फेर रहा है

कोई जन्दी जन्दी बनता,

कोई कही किमी को धनता

यह ता है बाजार अनोखा

यहां सभी खाते हैं धोखा,

फिर भी कोई धेन न पता

रक दूसरे को समझता

जि भी एसा हान जि न।
कोई नही समझे दावा

सब है पंडित भारो पानी,
तुनुक मिजाजी हैं अभियानी

दग में अलग अलग है भांकी
जान जितनी मजिब दाकी

देस रहा हू नगा तमादा,
क्यों बिहसता कही कर्भ-मा

हर है दृश्य न वन जाऊ म ।
दृष्टा धनकर पद्यताऊ है ॥

सदीप्ति

कल जभी कुछ रात भी गी—
दद-सा कुछ जाग आया,
क्या बताऊ कौन थी वह—
दीप था किसन जनाया ?

उस अकेले सूत क्षरा में
था न कोई पास मेरे
एक सूनी दाद कोई—
थी मुझे चुपचाप घेरे,

रोम के हर कर मुन
वनना रहे उमेष ही हू ।
मैं पिया के देश मे
आया हुआ संदेश ही हू ।

सुन जवानक जग गया मैं—
भाव का उमाद छाया
एस अभावस की निशा में—
भी अनोखा चांद आया,

याद ही में दे गई थी
स्नह की सीमान-पानी
डूब कर मन पट रहा था,
प्यार की अनमोल धाती

जब कभी भी मीत मैं—
रक्त पाता याद जगती
याद का तस्वीर कोई
वक्ष से चुपचप लगती

और लगता स्नह-पाती
प्यार के सदेश स भर—
दे गई पुरवा जगाकर—
दीप्ति का सवेग सत्वर ॥

मन पर कुछ अधिकार न समझो

मन पर कुछ अधिकार न समझो ।

सुभा जगह जाकर थक आता
जपन पग पग पर परमाथ

मन न मिला न मन का साथी—
मेरा यह संसार न समझो ।
मन पर कुछ अधिकार न समझो ।

पीडा जगती गीत बनाता
अधिकार में ज्योति जगता

मरे घाटा जा कडिया को—
भवा न रद्गार न समझो ।
मन पर कुछ अधिकार न मन । ॥

पथ का हारा बंदम चन्ना,
घरनो ही उठाना में गन्ना।

मुझे आरती की थाली का—
पुण्यव्रती घनसार न समझो ।
मन पर कुछ अधिकार न समझो ।

जमने दो विश्वास

जमने दो विश्वास ।

माना शक्ति बड़ो सीमित है
शूलों से अंतर परिचित ।

फिर भी क्षीण न हो सकता है—

प्राणों का उल्लास ।

जमने दो विश्वास ॥

चाहे हों आसों से अभ्रम
साध न उर के होंगे निष्फल

मन का पछो बंध रहा —

पाखा में आकाश ।

जमने दो विश्वास ॥

गोना गीला ननिन विशाचन
अजन तक बन गये निरजन

जाने धव से टूट रहा है—

भूतन का इतिहास ।

जमने दो विश्वास ॥

चित्र हृदय का

चित्र हृदय का
पन-पन दीपित
ज्यातित जम्बर
भूतन सीमित

घन घिरत जब
उपर - उपर
झिन उठता है—
तरु वृण भू पर,

जब निदाघ की
सू इठनाती

धरती क्षण-क्षण
जब अकुलाती,

कवि का अंतर
ठ्याकुल होता
अपना सारा
सम्बन्ध खोत ;

कोई मन के
प्राण शिखर पर
दीप्ति नई ही
साता सत्वर,

तब मन सहसा
भर जाता है
भाव दिया का
भर जाता है,

कहते सब हैं
पौरुष जागा
मानव ने है
जानस रयागा,

यही समय है
उज्ज्वलता का
जीवनभर की
निमसता का,

इसी समय पर
सब योद्धावर,
करुणा सारी
दुःख का सागर,

इसकी ही जय
कहता रहता,
इसी लिए सब
सहता रहता,

निभयता है
मेरी साक्षा ।
मैं ही जग को—
विजय पताका ।

सुनसान डगर का मैं राही

सुनसान डगर का मैं राही ।
मजिल का मुझको चाह नही
बाधाआ की परवाह नही,

हसते हसते स्व भन गया—
आई चारा ओर तवाही ।
सुनसान डगर का मैं राही ॥

अव नही किसी पर रोष मुझ,
है अपन पर सतौष मुझ,

एस तो सब रात ही है—
झियकी होती कद मनचाही ?
सुनसान डगर का मैं राही ॥

मैं जडिग सदा अपने पथ पर,
हाता हू कभी नही कातर,

आनेव ला ही पायेगा,
गोतो से मन नहलायेगा

जिसरी रूचद्रा वो जा जाये
स्वर मे प्रीत मिनाकर गाये

इसका गुजन मगलमय है ।
मानवता की जय निश्चय है ॥

दाग हृदय का कितना गहरा
वैठ गया सासो पर पहरा

व धन मे जकड़ा जकड़ा-सा
जीवन का प्रतिभण लगता है ।
उखड़ा-उखड़ा मन लगता है ॥

सापो का है जोर भयकर
महामरण का शोर भयकर

जर उगवना सा अब प्रतिपन -
स्रभिन च इन वन लगता है ।
उखड़ा उखड़ा मन लगता है ॥

उस दिन की है बात निराली

उस दिन की है बात निराली
सूझ रही थी सब हरियानी
रेसों में ही जास्र मिनो थी
सहसा कोई कनी खिनी थी
सब कुछ का था नूतन परिचय
आया था मादक गरुणोदय
सांस तेज थी हृदय लगा था
पहला पहला दर्द जगा था

×

×

किंतु आज सब बीत गया है
पनघट का रस रीत गया है
जब ता वर्षा भी जब जाती
पिंजड़े की चिडिया अकुनाती

भूनस चाहे भरा-भरा हो,
करा-करा अवनि का निखरा हो
सब मे रहती घनी उदासी,
सागर मे ज्यो मीन पिआसी

×

×

लेकिन इसका अत निकट है
कटने ही वाना सकट है
आंगो मे आभा जगती है
तई फिरग की लो जगती है
फिर तो मेरा फूल खिलेगा
मन मानस का मोत मिनेगा
तप का सश प्रतिदान मिनेगा
चतक को वरदान मिनेगा ।

चाँदनी मुस्का रही है

चाँदनी मुस्का रही है ।

चाँद ऊपर झिलझिलानाता,
सिंधु मन में ज्वार आता
रश्मि रथ पर आज कोई नेह की धुन गा रही है ।

चाँदनी मुस्का रही है ॥

दृग कुमुदिनी के सुने हैं

ताप अन्तर के धुने हैं

याद में रोती चकोरी आग निर्भय सा रही है ॥

चाँदनी मुस्का रही है ॥

मन्द तारों की घटा है

दूर आँसुओं से घटा है

मूल की मुस्कान से अनुरागिनी ही जा रही है ॥

चाँदनी मुस्का रही है ॥

कौन ऐसे में अकेले—
चादनी का भार भेले
प्राण के हर तार पर अब वेदना नकुना रही है ॥
चादनी मुस्का रही है ॥

गू जती है रागिनी

गू जती है रागिनी ।

कौन वशी टेरता है
गीत का स्वर घेरता ३

आ रही है ध्वनि वहां से—
आज यह उमादिनी ।
गू जती है रागिनी ॥

है सुवामित भूमि अम्बर,
है प्रकाशित नह का घर;

दूर नन्दन कुञ्ज से ही
आ रही है चादनी ।
गू जती है रागिनी ॥

कौन विरही रो रहा है,
भार उर पर ढो रहा है,

वज्र का उर वेधती है—

एक कोमल सी कनी ।

गूँजती है रागिनी ॥

भ्रमर फूलों पर विहसता,

फून सौरभ स्वास कसता

प्रार के हर तार पर सज—

जा रही है कामिनी ।

गूँजती है रागिनी ॥

तुमको भी जो छोड़ चले थे

तुमको भी जो छोड़ चले थे—

जो थे अपनी धुन में खोये
रखते मन के हार पियरे,

वे भी लौट रहे हैं देखा—

जो सबसे मुह मोड़ चले थे ।

तुमको भी जा छोड़ चले थे ॥

जिनको वस अपना मतलब था,

ध्यान उहे किसका कुछ तब था,

वे भी सबके दुख में रोते—

जो सब नाता तोड़ चले थे ।

तुमको भी जो छोड़ चले थे ॥

सरिता की धारा अब बहती

नई भावना उर में बहती,

वै भी मित्र बने जन-जन के—
जो सब साध मरोड चले थे ।
तुम को भी जो छोड चले थे ॥

आज मुझको गीत गाने दो

आज मुझको गीत गाने दो ।

काशिया की वारुखी पीकर—
रात हसती है हस जो भर
इस तिमिर का अन्त निश्चय है एक दीपक बस जन,ने दो ।
आज मुझको गीत गाने दो ॥

घार भग्ना जा रहा है जो—
प्रणय भीषण घा रटा है जो—
नियति की यह क्रूरता भी सत्र श्रांत होगी स्वर जगान दो ।
आज मुझको गीत गाने दो ॥
कीन पथ पर आज आयेगा—
विघ्न की चट्टान लाथगा,
एक क्षण भी तुम न बोलो अब, इस कल्प को लो मिटाने दो ।
आज मुझको गीत गाने दो ॥

आज विह्वल मन हमारा

आज विह्वल मन हमारा ।

सिंधु में है प्वार उठता
हर तहर से प्यार उठता,

बह बनी है आप अपने—

स्नेह को अनमोल धारा ।

आज विह्वल मन हमारा ॥

दूर नभ में भिनभिनाते,
रूप जीवन का दिखाते,

ज्योति का आभार उज्ज्वल—

नील नभ का सब सितारा ।

आज विह्वल मन हमारा ॥

हर किरण में व्यास जगती,
आग सागर में सुनगती;

सग रहा देखै तुमको—

दृढ़ता है विश्व मारा ।

आज विह्वल मन हमारा ॥

कौन जो को शक्ति देगा,

मृत्तिका को कान्ति देगा,

इस तरी को कौन देगा—

फूट से सज्जित किनारा ।

आज विह्वल मन हमारा ।

आज खुशी की यह वेला है

आज खुशी की यह वेला है ।

नया सान है, वर्ष नया है
नई खुशी है हर्ष नया है
तनिक भूत जा वह पिछला दिन—

जो तुमने सक्कट भेना था ।

आज खुशी की यह वेला है ॥

आओ हम सब खुशी मनायें,

पुण्य-वर्ष में नाचें-गावें,

सत्य करो उन सब रूपना की—

तगा हुआ जिनका मेना है ।

आज खुशी की यह वेला है ॥

बरसो बादल बरसो पानी,

सहरादो फिर आवत धानी,

धरती पर है घोर विषमता,

शांति कुञ्ज में ही मन रमता,

जीवन का अनुभव कहता है—

शांत सरोवर का जल निर्मल ।

जाग रही अन्तर में हृत्तवन ॥

दुनिया भर का व्यग सहा, पर

दुनिया भर का व्यग सहा, पर—

कही न मुझको प्रीत मिनी ॥

फूल खिला, कण-कण मुसकाया,
लेकिन मेरा मीत न जाया,

मेरे दिन को अधियारी से—

अब तक कभी न जोत मिनी ।

दुनिया भर का व्यग सहा, पर—

कही न मुझको प्रीत मिली ॥

हसता भूतल पर पुनवासी
आस फिर भी अब तक प्यासी,

आसू पीकर प्यास मिटा लू —

ऐसी कही न रीत मिली ।

दुनिया भर का व्यग सहा पर—

कही न मुझको प्रीत मिनी ॥

मैं छोटा बादल का टुकड़ा,
विद्यत मेरे मन का दुखड़ा,
मुझसे केवल इस दुनिया को—

छलना सहज समीत मिली ।

दुनिया भर का व्यग सहा, पर—

कही न मुझको प्रीत मिली ॥

जिससे दूर रहा करता हूँ

जिसका त्याग सदा करता हूँ

मुझको मेरे पथ पर जग से—

केवल वही प्रनीत मिली ।

दुनिया भर का व्यग सहा पर—

कही न मुझको प्रीत मिली ॥

मौन मेरा गान क्यों था ?

मौन मेरा गान क्यों था ?

पूर्णिमा को था कुतूहल
थी निशा में एक हनचन,

चांद का मुख म्लान क्यों था ?

मौन मेरा गान क्यों था ?

शुष्क खरडहर रो रहे थे,
गीत पिक के सो रहे थे,

करुण पर अभिमान क्यों था ?

मौन मेरा गान क्यों था ?

मधुर वधन में वधा था
देदना का स्वर सधा था,

चाहता मधुपान क्यों था ?

मौन मेरा गान क्यों था ?

दीप की लौ टिमटिमाई
रात थोड़ी मुसकुराई,

शुनभ का वलिदान कयो था ?

मौन मेरा गान कयो था ?

आज मध्या ढल रही है

आज सध्या ढल रही है ।

व्योम नोहित लग रहा है
पाम ही तम जग रहा है

नीटते हैं नीड में सग
सांस धीरे चल रही है ।

आज सध्या ढल रही है ।

शांत कोलाहल दिवस के
रिक्त-से हैं कलश रस के

दृश्य दिन की वेदना तक—

आप अपने गल रही है ।

आज सध्या ढल रहा है ॥

एक तारा गा रहा है

आज कोई आ रहा है,

भूमि की आराधना को—
रात मानो घन रही है ।
आज सध्या टल रही है ॥

भीगती है रात काती,
नेह का है पात्र खाली,

किंतु फिर भी शुष्क उर में—
रागिनी सी पल रही है ।
आज सध्या टल रही है ॥

कितनी काली

कितनी काली
है यह रात ।

नही हाथ को
हाथ सूभता,
जपने से ही
आप जूमता
कानिस्स सगती
कितनी गहरी,
दिशा दिशा तक
सगती बहरी,
दूर बहुत ही
सगता प्रात ।
कितनी काली
है यह रात ॥

कोई भी अब
पास नहीं है
वश में अपनी
सांस नहीं है

भर-भर भरती
नभ से प्यारा
सूख गया है—
रस का प्यारा

जलते जीवन ।
के जलजात ।
कितनी काली
है यह रात ॥

सुनता कोई
नहीं किसी को,
पूरी होता—
कथा न जा की

फिर भी कसे
मन जीता है

मन ने रती
मन का दंत ।

कितनी काली

है यह रात ॥

सूना पथ है

सम्बल दे दो;

पथिक जकेला

कुउ बन दे दो,

यो तो ऐसे

टूट चुका है,

जपनों से भी

घूट चुका है,

नही सहेगा

अध जाघात ।

कितनी काली

है यह रात ॥

निकला एक सितारा

निकला एक सितारा ।

नभ का कितना विस्तृत आगन,
कुसुमित सुरभित जीवन उपवन,
कल-कल सहज प्रवाहित मेरे—

नभ गगा की धारा ।

निकला एक सितारा ।

ऊपर जितना सजा गगन है
उपर उतना भू धा मन है;
प्रतिक्षर प्रतिपल आँसो मे है—

दिसता रूप तुम्हारा ।

निकला एक सितारा ।

चवन कितना जन सरिता का
भव विमल मन को कविता का
गति मति के आगे रता है—

सदय एक अद-तरा ।

निकला एक सितारा ।

जब भी बाव भवर में बढ़ता,
गिरि के उच्च शिखर पर चढ़ता,

तदा तुम्हारा मुझे प्राप्त है—

नेदिवत एक सहारा ।

नेकना एक सितारा ॥

मन मारे दीपक जलता है

मन मारे दीपक जलता है ।

ज्योति शिक्षा की मन्द-मन्द है

द्वार विभा का दन्द बन्द है।

देख रहे सब अपनी जवाना में घन्कार पिघलता है ।

मन मारे दीपक जलता है ॥

आघातो ने दिल टूटा है

वर्द्धन से निभर फूटा है।

आहों के सागर में पड़कर निमग पत्थर भी गलता है ।

मन मारे दीपक जलता है ॥

खुनकर हसते सुमन सवेरे

भीरा क दन रगते घेरे

साभ उतर कर जल आती है चद्रकर गुरज भी टलता है ।

मन मारे दीपक जलता है ॥

अत तिमिर का होगा निरवध,

भय रहा , तमन परसोदय

एक किरण की प्रत्याशा में पथो भी पथ पर चलता है ।

मन मारे दीपक जनता है ॥

कैसा यह अनुराग ?

कैसा यह अनुराग ?

एक तरफ जलती है ज्वाला ।

और दूसरी ओर हृदय की—

शीतलता की मादक हाता ।

ज्ञानम भ्रूसता, ज्वलित शिक्षा से गुजा दीपक-राग ।

कैसा यह अनुराग ?

चांद बिहसता नभ में ऊपर ।

रश्मि किरण में मुग्ध चक्री—

चुगती ज्वालना क्षण इस भू पर ।

एक तरफ है ग्रहण दूसरी ओर किसी का त्याग ।

कैसा यह अनुराग ?

फँक रहा है रह-रह पासा

मत की फिर भी दात न होती—

पानी में भी जीवन प्यासा ।

तट पर फूल खिले सागर के ऊपर केवल भाग ।

कैसा यह अनुराग ॥

निमग्नता का अंत नहीं है ।

पतझर भा हसता है लेकिन

गाता यहाँ वस्तु नहीं है ।

कही किसी का भाव व क्षिप्तता रो-रो उठता फाग ।

कसा यह अनुराग ॥

गातो को वरदान चाहिए

गीतो को वरदान चाहिए ।

विमल हृदय का दान चाहिए ॥

य निष्कलुष सिंधु के मोती

इसमें अनुपम आभा सोती

इसकी विमल ज्योति को भू के—

जन-जन का सम्मान चाहिए ।

गीतों को वरदान चाहिए ॥

कभी न इसकी कथा पुरानी

बन्द न होगी कभी कहानी

इसके चरण वरण को गतिमय—

जीवन का अभिमान चाहिए ।

गीतों को वरदान चाहिए ॥

पदार सिंधु के प्रगम अनपरिमित,

उच्छ्वन लहरों के दल सीमित

नई उमर्गों को जब पावन—
भावा का जनयान चाहिये ।
गीतों को वरदान चाहिये ॥

पग-पग पर पर्वत है दुर्गम
तिमिर चतुर्दिक फौना विमम

नद्यमुखी जीवन को निर्भय—
बढ़ने का अभियान चाहिये ।
गीतों को वरदान चाहिये ॥
विमन हृदय का दान चाहिये ।

गाने वाला आ न सकेगा

जाने वाला आ न सकेगा ।

जिसको सदा बुनाता रहता—

शायद आ न सकेगा ।

अपनी अपनी सबकी उनमन,

घरशों में ममता का बंधन,

जिसको सुनना चाह रहा मैं—

शायद गा न सकेगा ।

डूबे जगजग कुल किनारा,

दरसे भू पर रस की धारा

अपने नभ मे जिसे चाहता—

शायद द्वा न सकेगा

धरती का करा प्याना प्यासा,

पूर हुई शब्द शिपकी जाश ?

कोई तम के वधुस्थन पर—

चित्र दना न सकेगा ।

जिसका मदा बुनाता रहता—

शायद जा न सकेगा ॥

हम दोनो का इस धरती पर

हम दोनो का इस धरती पर—

है नूतन सबंध ॥

जाने कब से लहर-लहर को

चूम रही है

जाने कब से सृष्टि कीत पर

घूम रही है

गात नही कब से हम दोना—

भूतन पर निबन्ध ।

हम दोनो का इस धरती पर—

है नूतन सम्बन्ध ॥

जाने कब से कनी-कनी पर

भीरा गाता

जाने कबसे चातक अपनी

टेर सुनाता

भावा स उद्वेगित होता—

ज तरतर स्वच्छन्द ।

हम दाना का इस धरती पर—

है नूतन सम्बन्ध ॥

×

×

जहाँ कही भी मेह गगन का

रस बरसाता

जहाँ कही हरियानी जाती—

मन मुस्काता;

हम दोनों का नेह बना है—

मादक सुरभि सुगंध ।

हम दाना का इस धरती पर—

है नूतन सम्बन्ध ॥

रस में आख पगी है

रस में आख पगी है ।

उस दिन देखा था सपने में
अपने से ही ये अपने में,

बीत गये दिन कितने सेकिन—

जब तक टेक टगी है ।

रस में आख पगी है ॥

जाते जाते तुम आ जाओ
सूखे सूखो पर नहराओ

साँसों की हर आहट तक पर—

मेरी आख जगी है ।

रस में आख पगी है ॥

जाने कब स डूम रहा हूँ
चरस चरण पर भूम रहा हूँ

कौन बताये हम दानों की—

कव सु प्रेन नगी ३ ।

रम में अंश गगी ३ ।

सब कुछ अपने करना होगा

सब कुछ अपने करना होगा ।

कम-प्रधान विश्व को माया

सत्य स्वयं लगतो है छाया

नही चाहकर भी अपन पर—

भार विश्व का धरना होगा ।

सब कुछ अपन करना होगा ।

क्षरा क्षरा में विह्वलता बढ़ती,

मन की करुणा दृग पर चढ़ती

साधन का पतवार साथ ले—

गहन सिंधु को तरना होगा ।

सब कुछ अपने करना होगा ॥

सूख गये दृग जाह नही है

बनने को भा राह नही है,

चाह तुम्हारी जब जग आये—

जीवन मे भी मरना होगा ।

सब कुछ जपने करना आगा ।

उखड़ रहा सब मेला

उखड़ रहा सब मेला ।

बहुत देर से देख रहा हूँ—
जाने जाने का जमघट है
नया-नया बाजार लगा है—
आपा धापी या छटपट है,

सभी तरफ हो हल्ला होता—
मुझ-सा कोई नहीं अकेला ।

उखड़ रहा सब मेला ।

कोई बन्दर नचा रहा है
कोई रचता खेल तमाशा
कोई चर्खों पर चढता है
कोई खाता कही पताशा,

कोई माटर हाँक रहा है—
कोई चना रहा है ठेला ।

उखड़ रहा सब मेला ।

इस मैने का हान यही है—
बहुत जोर से लग जाता है,
दो ही दिन रहता है लेकिन—
शाश्वत जसा जग जाता है

सत्य मान कर ही सब चलते—

येसा है यह खेला ।

उसड़ रहा स्व मैला ॥

दो ही क्षण में सूनी सूनी
मारी दुनियाँ यहाँ लगेगी
कोई लाख कहेगा लेकिन
जास्र किसी की नहीं जगेगी

मिट जायेगा क्षण दो क्षण में—

जग का सभी भमेला ।

उसड़ रहा सब मैला ॥

राग रग की

राग रग की—

रेना घई

कनियों पर

निखरी उरगाई

सब कहते हैं—

पहना स्वर है

ममय सिद्धु की—

यक रार है।

वेकिन यह भी

दो ड उँसा

नितने व

एन है दसा

एन भी डू पर

नयी टिकेसा

इसका भी दन
सब बिसरेगा

यही जगत की
रीत पुरानी,
यही भुवन का
है जाकर्षण,

इसी सहर पर
एक सहारे,
बैठ गये हैं
मद दनजारे,

जिसको जब तक
ठोर मिला है
जिसको यह सिर—
मोर मिला है;

तब तक उसकी
बात रहेगी
सारी दुनिया
कथा कहेगी

नैकिन सत्र म
कान प्रन्न ३
उमके भाग—
कौन सदम है ?

वह जायेगा
निश्चय मानो
जभी समय है—
जग पहचानो

इसी निय कहता
ह जागो
अपना जानम
तद्रा त्यागो

जरगोदद को
बेना आई
सुरभिमयी उप
मुस्काई ।

अपने पन की चाह नहीं है

अपने पन की चाह नहीं है ।
मुझको जब कोई क्या देगा ?
कौन हृदय-पट पर उतरेगा ?

कांटा से जब कष्ट न कुछ भी—
फूलों की परवाह नहीं है ।
अपने पन की चाह नहीं है ॥

टूट गया बंधन का घेरा
विना मन में मिनन सवेरा

एक डोर धर चरग न द्राया—
लौरी दूमरी राह नहीं है ।
अपने पन की चाह नहीं है ॥

एक हृय सुख-दुख के लोचन
नश्य बना जीवन-आराधन,

मन में कोई राग न बाकी —
किसी तरह का दाह नहीं है ।
अपने मन की चाह नहीं है ॥

राह

मेरी अपनी राह रहे ।

चू न मैं दुनिया के ऐसा,
रहू सदा अपन ही जैसा
तद्वय अनन्य रहे पर इमका—

मुझे न कुछ परवाह रहे ।
मेरी अपनी राह रहे ॥

भेद-भाव कुछ रहे न मन में,
विक्रम प्राण हा जग क्रन्दन में,
सुखद शानि फले धरती पर—

कही न कोई दाह रहे ।
मेरी अपनी राह रहे ॥

तलके कभी न दृग तातो पर,
भय से हो मन कभी न कातर,
काट करे न विवर्तित पग को—

फूलो की नही चाह रहे ।
मेरी अपनी राह रहे ॥

अब दिग्मता सब मिटाओ ।
प्रम की भाषा पढ़ाओ ॥

डोल रही पुरवाई

डोल रही पुरवाई ।

जपने ही जब हैं परदेशी

पाई ३ क्यों बिघुड सुकेशी,

भोगा-भागी हवा न जाने—

कौन सदेशा ताई ।

डोल रही पुरवाई ॥

सिहर रहा है तरु-तरु तृण-तृण,

घर बाहर का क्षण क्षण कण-कण

किसके स्वागत में पुनक्ति ३—

सावन की तरुणाई ।

डोल रही पुरवाई ॥

भर भर-भर भरता है अम्बर

गिरि से उतर रहा है निर्भर

परती धरती पर जीवन को—

उवरता लहराई ।

डोल रही पुरवाई ॥

आज तपस्या स्वयं खिनी ॐ

शीतल मन का शांति मिनी ॐ

गहन तमिस्रा में जागृति की—

तहर-नहर मुसकाई ।

ढोल रही पुरवाई ॥

कितना छोटा घर है

कितना छोटा घर है ।

विस्तृत धरती बटी बटी—सी,

जनग-जनग छाया सी-सी-सी,

एक भुवन में जनग जनग सबके गीता का स्वर है ।

कितना छोटा घर है ॥

दावारों से हवा बटी है

क्यारों में धारा सिमटी है,

प्रकृति-बटी को सीमित करने में मानव तत्पर है ।

कितना छोटा घर है ॥

ऊपर व्योम किान तना है,

सभी तरह से भ्रम बना है,

उस असोम का चना तोवन लघु विहगों का पर है ।

कितना छोटा घर है ॥

इस घथात सागर मे मानव
दूट रहा ॐ मोती अभिनव
मन मे द्वै निवध उमर्गे साधन बधन भर है ।
जितना छोटा घर है ॥

